International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 11, Nov- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

''ब्रिटिश शासन में संयुक्त प्रान्त के कृषकों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति''

डॉ० आशा यादव
एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास विभाग)
एम०एम० (पी०जी०) कॉलेज, मोदीनगर,
गाजियाबाद

राजू झा
शोध छात्र (इतिहास विभाग)
एम०एम०(पी०जी०)कॉलेज,मोदीनगर,
गाजियाबाद

शोध सार

भारत के साथ ब्रिटिशों ने अपने सम्बन्धों की जो शुरूआत की थी, वह शुरूआत एक प्रकार से अच्छी शुरूआत कही जा सकती थी। परन्तु ब्रिटिशों ने सबसे पहले भारत के साथ व्यापार किया था और इस व्यापार के साथ–साथ वे यहां के शासन व प्रशासन में भी दखल देने लगे थे। इसी कारण से उन्होंने यहां की आर्थिक व राजनीतिक प्रणालियों को भी प्रभावित किया था, परन्तु उन्होंने भारत के सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन पर अपना प्रभाव धीरे–धीरे किया था। 1813 तक उन्होंने भारतीयों के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में अहस्तक्षेप की नीति का पालन किया था। फिर भी इन क्षेत्रों में अपने आप ही परिवर्तन आता जा रहा था।

बीजक शब्द– भारत, ब्रिटिशों, आर्थिक, सामाजिक, भारतीयों, अंग्रेज उद्योग, कटीर, पूँजीवाद, गाँव, शहर, कृषक, खेती, भू–राजस्व, जमीन, संयुक्त–प्रान्त, जमींदारी।

भूमिका

भारत की अर्थव्यवस्था और उसके सामाजिक जीवन को किसी भी विजेता ने इतना ज्यादा प्रभावित नहीं किया जितना कि ब्रिटिश साम्राज्यवादी सरकार ने किया था। अंग्रेज भारत मे आये विजेताओं में पहले विजेता थे, जिन्होंने प्रारंभिक समाज को तोड़कर, प्राचीन उद्योगों को तो समाप्त किया ही और साथ ही साथ प्रारंभिक समाज में जो कुछ भी उच्चतर था, उसकों भी समाप्त कर दिया था। अंग्रेज अपने देश में सामांती व्यवस्था को समाप्त कर पूँजीवादी व्यवस्था की स्थापना कर चुके थे, और भौतिकवादी व्यवस्था के अनुरूप ही अपने यहां सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं नैतिक मानदंड़ों की स्थापना कर चुके थे। पूंजीवादी राष्ट्र सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से सामंती जन–जीवन की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली होता है, क्योंकि वह उजड़े हुए उत्पादन तकनीक पर

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 11, Nov- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

आधारित होता है। इस वजह से अंग्रेजों ने साम्राज्यवादी औपनिवेशिक हितों के अनुरूप परंपरागत भारतीय व्यवस्था को समाप्त करके एक नई व्यवस्था को जन्म दिया था।[1]

प्राक्ब्रिटिश भारत की अर्थव्यवस्था एक संतुलित व्यवस्था थी, जिसके दो मुख्य स्तंभ थे– कृषि एवं कुटीर उद्योग औद्योगिकरण के अभाव के कारण भारत में आधुनिकीकरण नहीं आया था। अतः तत्कालीन भारतीय व्यवस्था एक ग्रामीण व्यवस्था मात्र थी।[2]

प्रशासनिक व आर्थिक दृष्टि से भारतीय गांव एक आत्मनिर्भर गणतंत्र था। पूँजीवादी व्यवस्था के अभाव में प्राक् ब्रिटिश भारतीयों का जीवन बहुत ही सीधा–सादा था और उनकी अधिकांश जरूरतें गांव में ही पूरी हो जाया करती थी। कृषि व उद्योग क्षेत्र में स्पष्ट अलगांव न होने के कारण श्रम–विभाजन उतना स्पष्ट नहीं था, इसलिए जहां किसान खेती करता था, वहीं उसका पूरा परिवार सूत कातने का काम भी करता था। गांव की जरूरतों की पूर्ति गांव में ही होने के कारण गांव और शहर में पूर्ण अलगाव की स्थिति थी। इसी के परिणाम स्वरूप किसी भी उच्चतर अर्थव्यवस्था का जन्म नहीं हो सका था।[3]

ब्रिटिश शासन में संयुक्त प्रान्त के कृषकों की सामाजिक स्थितिः–

ब्रिटिश शासन में संयुक्त प्रान्त के कृषकों की सामाजिक स्थिति की अगर हम बात करे तो हमें भारत में समाज के ताने बाने को समझने की जरूरत हैं। क्योंकि जब भारत में ब्रिटिश आये तो हमारी प्राचीन सभ्यता को एक धक्का सा लगा था। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत की अर्थव्यवस्था के पिछड़ने के कारण भारत के बुद्धिजीवी अंग्रेजी सरकार को दोष देते हैं, क्योंकि इसी कारण से भारत में धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों ने भारतीय समाज में व्यप्त गलत धारणाओं को खत्म करने के अनेकों प्रयास किए थे। इसी समय में कांग्रेस की स्थापना हुई थी। कांग्रेस ने अपनी स्थापना के तुरन्त बाद से ही इस महत्वपूर्ण दिशा में अपनी अहम भूमिका निभाई थी। इसके साथ ही साथ विभिन्न जातियों वर्गों, समूहों एवं समुदायों को राष्ट्र के प्रति सचेत किया था।

जिस समय अंग्रेज भारत में अपनी सत्ता चला रहे थे, उस समय 89 प्रतिशत जनता गांवों में निवास करती थी, जब से अंग्रेज भारत में आये थे, तभी से भारत के अन्दर छोटे–छोटे नगरों का विकास होना प्रारम्भ हो गया था, और समाज नये–नये वर्गों में परिवर्तन होता चला गया था। इन वर्गों मे जमींदारी व ताल्लुकदारों के अलग–अलग वर्ग हमें देखने को मिलते है। भारत के अन्दर इन वर्गों का बहुत बड़ा हिस्सा हमें संयुक्त प्रान्त में देखने को मिलता है। संयुक्त प्रान्त की अर्थव्यवस्था व भारत की अर्थव्यवस्था बहुत कुछ इन्ही वर्गों पर निर्भर करती थी। इस वर्ग की इच्छा थी, कि सामाजिक सुधार

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 11, Nov- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

यहाँ पर नहीं होने चाहिए। परन्तु कुछ जो सही जमींदार थे, जो लोकतान्त्रिक तरीके से समाज में विकास के पक्षधर थे।[4]

उस समय गांवों में सुख–सुविधाओं का बहुत ज्यादा अभाव था। नगरों में लोगों को हर चीज की सुविधा मिलती थी, जिस प्रकार बच्चों को शिक्ष की सुविधा, मानवों को चिकित्सा की सुविधा और रोजगार के बहुत अवसर मिलते थे। जिस प्रकार हम वर्तमान में भी देखते है। इस वजह से ग्रामों से नगरों की ओर पलायन बढ़ता जा रहा था।

भारत में उस समय हिन्दू समाज में एकता का अभाव था। क्योंकि जाति व्यवस्था इस समाज में अवरोध पैदा करती थी। ब्रिटिश शासन व्यवस्था में उत्पन्न नये–नये वर्गों और नये–नये समूहों से इस समाज की एकता को बहुत बड़ा आघात पहुँचा था।[5]

ब्रिटिश भारत में सामाजिक एकता स्थापित करने के लिए यहाँ के कुछ विद्वान व्यक्तियों एक प्रान्तीय सामाजिक परिषद का निर्माण किया था। प्रान्तोय सामाजिक परिषद ने समाज में एकता लाने के लिए कुछ प्रस्ताव पारित किये थे, जो इस प्रकार से हैः–

1. अलग–अलग जातियों के घरों में भोजन का आयोजन किया जाए।
2. अलग–अलग जातियों में विवाहों के आयोजनों को प्रोत्साहन देना।
3. जाति–व्यवस्था को समाज से खत्म करने का संकल्प लेना।[6]

अग्रेजों के शासन में भी समाज में यह चलन था, कि जो जिसका पैतृक व्यवसाय था, उसकी आने वाली पीढ़ी भी उसी व्यवसाय को अपनाती थी। इस समय में परिवार 'संयुक्त परिवार' में रहते थे। इससे एक सम्मिलित एक भावना से कार्य किये जाते थे। परिवार का जो मुखिया होता था, वह ही पूरी सम्पत्ति का प्रबन्ध और परिवार के जितने भी दायित्व निर्वाह होते थे, उन सभी को परिवार का वरिष्ठ व्यक्ति (मुखिया) ही देखता था। संयुक्त परिवार जिस प्रकार से सीमित शक्ति एक व्यक्ति के हाथों में शक्ति का घोतक होता था, तो वही इसके कुछ लाभ भी होते थे, जिस प्रकार से–

1. जो एक परिवार के पास कृषि भूमि होती थी, वह छोटे–छोटे हिस्सों में होने से बच जाती थी।
2. जो रहने के लिए मकान होता था, वह एक मकान ही बना रहता था।
3. जो खाना के लिए बनता था वह भी अलग–अलग बनने से बच जाता था।
4. संयक्त परिवार में कुछ, चुनिदा व्यक्ति ही जिम्मेदार होते थे। अलग–अलग जिम्मेदारियों से परिवार के सदस्य बच जाते थे।[7]

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 11, Nov- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

ब्रिटिश शासन में संयुक्त–प्रांत के कृषकों की आर्थिक स्थितिः–

ब्रिटिश शासन में संयुक्त–प्रांत के कृषकों की आर्थिक स्थिति एक प्रकार से बहुत ज्यादा दयनीय हो गयी थी, क्योंकि उस समय जो भारत के आर्थिक परम्परागत कृषि एवं कृषक व्यवस्था ढाँचे में जो परिवर्तन हमें देखने को मिलता है वह सब एक स्वभाविक व्यवस्था न होकर उन पर अंग्रेजो के द्वारा थोपी गयी व्यवस्था थी।[8]

पुरानी जमींदारी व्यवस्था बन्द तथा नयी जमींदारी व्यवस्था की शुरूआतः– ब्रिटिशों के द्वारा भारत की कृषि व्यवस्था में अलग–अलग परिवर्तन किये जाने के कारण भारतीय कृषि जगत में बड़ी हलचल पैदा हो गयी थी तथा भारतीय कृषक गरीबी की और अग्रसर हो गया था, जिसके निम्न कारण थेः–

1. अंग्रेजों की आर्थिक नीतियाँ।
2. भारतीय कुटीर उद्योगों की समाप्त होना।
3. भू–राजस्व की नयी–नयी व्यवस्था
4. अंग्रेजों का प्रशासनिक व न्यायिक व्यवस्था में हस्तक्षेप।

भारत का किसान वर्ग भू–राजस्व की ऊँची दरों, अवैध करो, आपसी भेदभावपूर्ण नीति, जमीनों से बेदखल करने की नीति और जमीदारी क्षेत्रों में बेगार कराने जैसी बुराइयों से बहुत ज्यादा परेशान थे। जब अंग्रेजों ने रेय्यतवाड़ी व्यवस्था लागू की तो उन्होंने किसानों पर भू–राजस्व बहुत ज्यादा बढ़ा दिया था। इस सभी कठिनाइयों से किसान कर्ज–लेने के लिए विवश होता चला गया था। यह जो कर्ज लिया जाता था वह महाजनों से लिया जाता था। ये महाजन किसानों को जो कर्ज देते थे, वह कर्ज बहुत ऊँची दरों पर देते थे, इस कारण किसान वर्ग ऋण के बोझ तले दबता चला गया था। अनेक अवसरों पर तो किसानों को अपनी भूमि या पशुओं को भी, महाजनों के यहां गिरवी रखना पड़ता था। कभी–कभी या ज्यादा से ज्यादा समय में कर्ज न चुकाने की स्थिति में महाजन लोग उनकी सम्पत्ति को जब्त कर लेते थे। इन सभी कारणों से किसान लगातार गरीब और मजदूर बनकर रह जाते थे, इसका परिणाम यह भी होता था, कि किसान कृषि कार्य छोड़ देते थे और कृषि का उत्पादन घटता चलता गया था।[9]

वर्ष 1815 के अन्तिम समय तक बंगाल जैसे प्रान्त की कुल भूमि का लगभग 50 प्रतिशत दूसरे के हाथों में चला गया था, इन नये हाथों में कृषि भूमि के जाने से जमीदरों के एक नये वर्ग का उदय भारत में देखने को हमें मिलता हैं। जमींदारों के ऐसे नये वर्ग के पास शक्तियाँ एवं बहुत सारे संसाधन उपलब्ध होते थे। यह वर्ग जो था, वे जमीनों के ऊपर कब्जे करने के बाद हमें देखने को मिलता है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 13 Issue 11, Nov- 2023
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 8.018
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

अंग्रेजों की जो लगान व्यवस्था थी, उससे देखने में आता है, कि बिचौलियों के आने से मुख्य जमींदारों का वर्ग खत्क होता चला गया था। इस व्यवस्था से किसानों के ऊपर बोझ बढ़ता चला गया था और भूमी की जो मांग थी वह भी लगातार बढ़ती चली गयी, इस कारण से जमीन की कीमतों ने भी उछाल मारा था, और यह भूमि कृषकों की पहुँच से बहुत ज्यादा दूर होती चली गयी थी। ऐसा देखने को मिलता है, कि जो मुख्य जमींदार थे, उन्होंने कृषि के विकास में कोई रूची नहीं ली, इसी कारण उन्होंने कृषि में निवेश करना और कृषि के कार्यों से अलग होते चले गये थे। परन्तु जमींदरों का हित उस समय ब्रिटिश शासन चलते रहने में ही था, इसलिए इस वर्ग ने राष्ट्रीय आन्दोलन में अंग्रेजों का ही साथ दिया था।[10]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बंसल सोनाली, त्रिपाठी स्नेहिल : आधुनिक भारत का इतिहास, मेग्राहिल, प्रा०लि०, नोएड़ा, यू०पी०, संस्करण–2017
2. सहाय, डा० शिवस्वरूप : प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक, इतिहास, ऐक्सटिक भारत, नई दिल्ली, संस्करण–1998
3. झा, द्विजेन्द्रनारायण, श्रीमाली कृष्ण मोहनः प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, संस्करण–2011
4. थापर रोमिला : भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन प्रा०लि०, दिल्ली संस्करण–2018
5. रंगा एन०जी० : किसान सर्विस 1937 दि मार्डन इडियंन, भाग–2 दिल्ली, 1963
6. दत्त आर०सी० : द इकोनोमिक्स हिस्ट्री ऑफ इण्ड़ियां, भाग–2 दिल्ली, 1963
7. मिश्रा वी० आर० : लैण्ड रेवेन्यू पॉलिसी इन द यूनाइटेड, प्रॉविन्सेज, बनारस, 1942
8. सिंह चरण : भारत की भयवाह आर्थिक स्थिति, नेशनल पब्लिकेशन नई दिल्लो, 1982
9. चन्द्र विपिन : भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का उदभव और विकास, अनामिका पब्लिसर, संस्करण–2009